# जहाज के पंक्षी

प्रेमपाल शर्मा

# जहाज के पंक्षी

ऐसा कोई पहली बार नहीं हुआ था।

https://www.hindiadda.com/jahaj-ke-pankshee/

शुरुआत छोटी-बड़ी किसी भी बात से हो, अंजू के अंतिम वाक्य यही होते 'देखना जो न पछताओ तुम। मैं भी बस देख रही हूँ। डिंपी न होता तो अब तक...' इस आवाज में अप्रत्याशित सख्ती होती थी।

'तुम्हें जो करना है आज करो बल्कि अभी, और देखो ये पछताने न पछताने के शब्द तुम्हारे खानदान में होते होंगे। खबरदार जो फिर कभी दोहराया'। उसका अक्सर यह जवाब होता।

आज भी कोई विशेष बात नहीं थी। गाँव के तीन-चार आदमी आ गए थे। बस देखते ही माथा ठनक गया। मूड भाँपने के बावजूद भी उसने अंजू से नमस्ते कराई सभी को और फिर पानी लाने को कह दिया।

अंजू पानी रखकर चली गई।

'ये रोज-रोज कौन आ जाते हैं?'

वह चुप रहा। सिर्फ हौले से मुस्काते हुए बोला, 'बेचारे मुसीबत के मारे हैं।'

'तो सबको यहीं मरने की जगह रह गई है। एक-एक बारह-बारह रोटी खाएगा और फिर गाँव में जाकर कहेगा - बहू तो हमें टुकुर-टुकुर देख रही थी, तोला-सा मुँह खोले... उसने तो म्हारे पैर नहीं छुए... पैरों की शक्ल भी देखी है... झट्ट से चल देते हैं।' बिराते-बिराते उसकी आवाज तलवार-सी कटकर फर्श पर गिर पड़ी ।

माँ रसोई में खाना बना रही थी और अंजू प्लेटों में दाल-सब्जी सजाती रही थी। वह भी वहीं पहुँच गया 'कुछ काम से आए हैं मेरे डिपार्टमेंट का ही काम है।'

'पर काम क्या चार आदमियों का है? 'अंजू ने फिर आँखें निकालीं।

'यही तो इनका बावलापन है। ये न हो तो इन्हें गाँव वाला कौन कहे।'

'इनका काम करो, ऊपर से इनको घुमाओ, ये भी नहीं कि गाँव से आए हैं तो कभी एक गन्ना भी ले चलें।'

'अरे क्या करोगी। गन्ने कौन खाता है आजकल सर्दियों में, बेचारे सोचते हैं, इसी बहाने घूम आएँगे, दिल्ली।'

'ऐसे ही आपके चाचाजी हैं। चल दिए नेता बनके।'

वे सब खाना खाकर निश्चिंतता से बातों में मशगूल हो गए।

'ये अब जा रहे हैं या नहीं?' अंजू माथे का पसीना पोंछती हुई आई और सिपाही की तरह सामने खड़ी हो गई। 'कौन बनाएगा सुबह इनका खाना। रात को तो सुलाना अपने कमरे में, खबरदार जो किसी भी चादर से हाथ लगाया। धोनी तो पड़ती नहीं किसी को।'

'दो जो मूँछों वाले हैं न! वे तो कह रहे थे जाने की, पर अब तो जाते नहीं लगते।'

'तो जाकर कह दो कि तुम्हारा काम हो जाएगा। बस अब तशरीफ ले जाइए। ग्यारह बजे के बाद फिर बस भी नहीं मिलेगी... और नहीं तो मैं जाकर कह देती हूँ।'

'तुम्हारा दिमाग ठीक है। चकचक लगाए जा रही हो घंटे भर से।' उसे लगा कि इससे आगे ढील देने से सब कुछ गड़बड़ा जाएगा।

'तुम्हें तो कुछ करना नहीं पड़ता न, करना पड़े तो सब आँख खुल जाए।'

'अंजू! ये सब हमारे गाँव के आदमी हैं, चाचा, ताऊ के रिश्ते में। गाँव में सब एक-दूसरे से ऐसी ही उम्मीद करते हैं। दो-चार रोटियों में कुछ नहीं बिगड़ा जाता।'

'हाँ कुछ नहीं बिगड़ता दो-चार रोटियों में' - उसने बिराया 'करके तो तुम्हारी माँ दे देती है?'

'माँ भी तो करती है।'

'ओ हो हो हो! कर दिया। चाय तक तो दे नहीं सकती। पसरकर बैठ जाएगी उनके बीच में। एक मैं ही रह गई हूँ खटने को। नौकरी करो, ऊपर से इनकी तीमारदारी।'

'अपनी तो कर सकती हो।'

'नहीं करती, नौकरी किसलिए करती हूँ। हमारे कॉलिज की सभी लेक्चरार ने सरवेंट रखे हुए हैं, मैं भी रखूँगी और ठाठ से रहूँगी। देखें कौन रोकता है?'

'किसने रोका है नौकर लाने को तुम्हें।' मुझे गुस्सा आने लगा था। 'अंजू तुमने कुछ सीखा भी है करना? तुम क्या खाकर करोगी? ये लोग तुम्हारे भरोसे आते हैं? एक बात कहूँ - जब तक माँ है, इनको रोटी मिल भी जाती है, नहीं तो तुम्हारे जैसे इनको पानी भी न पिलाएँ।'

'मैं इनको दरवाजे में भी नहीं घुसने दूँ।'

'अंजू अपनी औकात में रहो। तुम कौन होती हो, दरवाजे में न घुसने देने वाली।' उसके अंदर कुछ टूट-सा गया था कि गाँव से कोई इतनी दूर आए और उसे घर से बाहर ही बाहर वापस कर दिया जाए! 'तुम ये क्यों भूलती हो कि मैं भी इनका एक हिस्सा हूँ। इन्हीं के बीच पला, बढ़ा और मुझे इस बात पर फख्र है।'

'फख्र है तो जाओ रहो वहीं जाकर। क्यों आए थे यहाँ?'

'अगर यही रहा तो वहीं जाकर रहूँगा। तुम्हारी इस किराए की किस्तों की कोठी में नहीं, जो किसी को एक घूँट पानी भी नहीं पिला सकती।'

'नहीं पिला सकती बोलो। किसी के बाप का नहीं खाती।'

'तो ये भी तुम्हारे बाप का नहीं खाते। समझे मेरी कमाई का है। एक दिन नहीं वो दस दिन रहेंगे। यह घर उनका है, उनके गाँव वालों का।'

'तो तुम खाओ और उन्हें खिलाओ।' कहकर वह खाना खाते-खाते थाली छोड़कर चली गई।'

वह खाना खत्म कर गाँव वालों के बीच कुर्सी डालकर बैठ गया।

'अरे भई चरणदास कभी-कभी गाँव तो घूम जाया करो या बिल्कुल ही भूल गए।' उनमें से एक बोला।

'हाँ आऊँगा! सचमुच सोचता तो हर बार हूँ पर घर-दफ्तर की ऐसी मारा-मारी रहती है कि...।' चेहरे पर बैठे तनाव ने उसकी बात नहीं पूरी होने दी।

'अरे यार सरकारी नौकरी में भी छुट्टियों की कोई कमी? कभी गन्ना वन्ना खा आओ... बच्चों को भी लेते आओ।'

'क्यों जी उन्हें तो कभी नहीं लाए।' दूसरे ने पूछा।

'नहीं वो भी आएगी। वो तो खुद कई बार चलने की कह चुकी है कि मैंने आपका गाँव नहीं देखा।'

'अरे यार तो फिर दिखा लाओ। दो दिन रूखी-सूखी ही सही। वो भी देख लेंगी तुम्हारी जन्मभूमि।'

'और सब ठीक है गाँव में, गभ्भा मास्टर के क्या हाल हैं?' उसने बात का रुख मोड़ा।

'हाँ खूब मौज है भइया। बस इसका काम करा दो इस बार। ये बड़ी उम्मीद से आया है। मैंने तो याते कही कि तू अकेली चलौ जा - चरणदास अपनौ ही बालक है पर नहीं मानो। हमने सोची हमीं क्या कर रहे हैं, चलो हम भी दिल्ली घूम आएँगे इस बहाने। एक बार तभी आए, जब चरणसिंह की रैली हुई थी।'

अंजू का पारा अभी भी चढ़ा हुआ था। उसकी आवाज बीच-बीच में इन लोगों तक पहुँच जाती थी, गर्म लू के झोंकों-सी। वह उसी क्षण या तो बिना वजह जोर से हँस देता था या ऊँचे स्वर में बोलने लगता, जिससे कि वे लोग नहीं सुन पाएँ।

जैसे-तैसे उसने 10-15 मिनट उनके बीच काटे और पिताजी को उनके साथ बतियाते छोड़कर अपने कमरे में जाकर लेट गया।

अंजू ऊँ उ उ... करके डिंपी को सुलाने की कोशिश कर रही थी। संभवतः उसकी उपस्थिति को भाँपकर उसने तड़तड़ उसके दो थप्पड़ जड़ दिए, 'दिन भर यूनिवर्सिटी में खपो और रात में इनसे खून चुसवाओ।'

डिंपी मार खाकर जोर-जोर से रोने लगा।

उसका मन हुआ कि डिंपी को उठाकर अपने पास ले आए पर उसके जोर-जोर से रोने को देखकर उसने हिम्मत नहीं की। थोड़ी देर में वह खुद ही सँभाल लेगी।

उसे स्वयं चुप लगा देना चाहिए था। आखिर एक दिन की हो तो कोई भुगते भी। यहाँ तो रोज ही कोई न कोई बैठा होता है। घर, कॉलेज, डिंपी... अंजू भी कहाँ तक करे। वह ठीक ही कहती है, 'आपको करना पड़े तब न।'

पर वह भी कौन-सा बैठा रहता है? दिन भर दफ्तर में कैसा हाल हो जाता है मानों फाइलें उसके पीछे दौड़ रही हों और वह फाइलों के। ऊपर से घर में घुसो नहीं कि शिकायतें ही शिकायतें। 'दफ्तर में तो सभी करते हैं, ये बताओ घर में आपका क्या सहयोग है। आए और अखबार खोलकर बैठ गए।' अंजू की बात से वह लगभग निरुत्तर हो गया। ऐसे तो मैं भी कह दूँ कि नोट्स बनाने में सिरदर्द हो गया, हाथ-पैर अकड़ गए... कुछ भी बहाने कर दो।

'दफ्तर की नौकरी और कॉलिज में बच्चों को बहकाने में बड़ा अंतर है।'

'आहा! सारी भारत सरकार इन्हीं के बूते तो चल रही है', कह कर वह डिंपी को दूध पिलाने लगी।

'ठीक है, आप काम करती हैं पर इसका मतलब यह तो नहीं कि किसी की कोई इज्जत नहीं। सभी छोटे-बड़े गधे-घोड़े बन गए। गाँव वालों ने उनकी तू-तू मैं-मैं सुन ली होगी तो क्या मुँह रह जाएगा। सारे गाँव में जाते ही खुसर-पुसर शुरू हो जाएगी अजी हमने तो पैले ही कहा कि बेटा पढ़ी-लिखी नौकरी वाली के पैरों में पहिए होते हैं, जरा सावधान रहना।'

'भई कैसी है तेरी अफसरी जो तू बहू से नौकरी करावे। औरत घर से बाहर निकली नहीं कि औरत नहीं रहती। बब्बरखान हो जाती है।' उसके गाँव के एक बुजुर्ग ने उसको सलाह दी थी।

'और खा ले औरत की कमाई। चली गई लड़के को लेकर भी। इसकी तो माँ भी ऐसी ही बताते हैं।' जितने मुँह उतनी बातें।

दिमाग में आई हलचल से उसकी नींद हवा हो गई। उसने घड़ी देखी। बारह बजकर 15 मिनट थे। डिंपी भी चुप होकर सो चुका था।

वह फिर से आकर लेट गया।

उसकी होगी तो उसकी इज्जत ही कौन-सी साबुत रह जाएगी। अंजू के तो बड़े भाई का तलाक हुए अभी दो महीने भी नहीं हुए कि लड़की भी वापस। अभी तो पहली वारदात से ही नहीं उभरे होंगे। लो रखो अपनी नौकरी वाली बेटी को अपने घर और खाओ इसकी कमाई। बची-खुची नाक भी कट जाएगी।

अभी तो स्याही भी नहीं सूखी होगी अंजू के लिखे खतों की। प्रिय श्यामा... आज मैं सोचती हूँ कि अरेंजड मैरिज के लिए लोग कैसे तैयार हो जाते हैं। बिना विचारों के मिले कृत्रिम ढंग से शरीर का मिलना भी कोई मिलना है। लगता है हम दोनों एक टाँग पर खड़े एक-दूसरे का इंतजार कर रहे थे। वायुदूत के पास मिलते हैं इन्हें फ्री जितने चाहो उतने। कभी तुम भी साथ चलने का प्रोग्राम बनाओ। इनका स्वभाव तो बस ऐसा है कि बिल्कुल बोर नहीं होने देते... तुम्हारी अंजू।

सुबह वह जब तक सोकर उठा, गाँव वाले जा चुके थे। माँ ने बताया कि उन्हें गाँव जल्दी पहुँचना था।

'चाय तो पी गए होंगे।'

'चाय भी नहीं पी... बहुत कहा।'

दफ्तर में भी वह अन्यमनस्क बना रहा। उन्होंने जरूर अंजू की बातें सुन ली होंगी, इसलिए बिना कुछ खाए-पीए चले गए।

शाम होते ही उसकी उदासी फिर सघन हो गई।

यों कोई अन्य दिन होता तो वह श्रीराम सेंटर जरूर जाता, पर आज चाहते हुए भी उसे 'चरनदास चोर' नाटक छोड़ने का निर्णय लेना पड़ा। बिना वजह तनाव बढ़ाने से क्या फायदा। उसके लेट पहुँचने से अंजू का पारा और पाँच डिग्री बढ़ जाता है।

घर समय से पहुँचने से भी कई बार वही होता है। 'मैं जब कॉलिज से आई तो डिंपी ऐसा भिनक रहा था कि... इन बुड्ढे-बुढ़ियाओं को तो कभी अक्ल आएगी ही नहीं। कितनी बार कहा है कि होम्योपैथी और एलोपैथी दोनों दवाएँ एक साथ नहीं देते, पर किसी की अक्ल में आए तब न... जब मन हुआ ये शीशी दे दी जब मन हुआ वो शीशी दे दी... साँय-साँय कर रहा है लड़का।' और ऐसे ही किसी मुद्दे पर बात काबू से बाहर हो जाती है।

शाम को जब घर पहुँचा तो जैसी कि आशंका थी, सन्नाटा छाया हुआ था। बरामदे का पीला बल्ब जल रहा था और दोनों छोटे भाई लंबे सोफे पर बैठे पढ़ रहे थे। माँ भी एक तरफ तख्त पर गुमसुम बैठी थी।

लगता था उसकी आहट के बाद ही उन्होंने बात रोक दी थी।

'क्यों, डिंपी आज बड़ी जल्दी सो गया?'

कोई कुछ नहीं बोला। उसका प्रश्न खुले दरवाजे से सीधा निकल गया।

'अंजू नहीं आई अभी कॉलिज से।' उसने फिर पूछा।

'वो आज गई ही कहाँ कॉलिज?' माँ कहकर उठी और दूसरे कमरे से दो चिट्ठियाँ लाकर रख गई।

'तूने कुछ कहा था रात को?' माँ ने प्रश्न में ही उत्तर मिलाते हुए पूछा।

वह समझ नहीं पाया कि हाँ कहे या ना, वह पढ़ी हुई चिट्ठी को फिर से पढ़ने का अभिनय करने लगा।

'भइया हमसे नहीं होती इससे ज्यादा चाकरी। इन्हें खिलाओ पिलाओ, गू-मूत धोओ रात-दिन, और ऊपर से गाली खाओ रात दिन... कहता था देखना पढ़ी-लिखी है, सबका कदर कायदा करेगी। वो तो सबका ऊपल्ला पाठ निकली। कैसी-कैसी चीख रही थी सुबह... हम सब तो गँवार हैं एक तू ही आकाश से पढ़ी-लिखी उतरी है।' माँ अनवरत कहे जा रही थी।

'कोई बात हुई थी ?' उसने पूछा।

'कुछ नहीं। लड़नहार बहू बिटौरा पर साँप बतावै। कल मैं सुन रही थी कैसी-कैसी तुझसे कह रही थी। आज सुबह डिंपी को ठंडे पानी से नहला रही थी। मैंने कहा गरम पानी रखा है, उसे ले ले तो बस इसी बात पर कि तुम कोई डाक्टर हो। मैं गँवारों के बीच घिर गई हूँ... कि मेरे बेटे को टॉफी दे देकर मार देंगे। बोलो हम उसे मार देंगे? जब भी जनकपुरी जाती है लड़का बीमार होकर आता है और इल्जाम हम पर लगाती है।'

'कुछ कह गई थी आने के बारे में?' उसे पूछना पड़ा।

'अजी वो कहती है। मुझे तो डिंपी की याद आ रही है। टा टा टा करता जा रहा था खुद ही... अम्मा जी चीज लेकर आऊँगा। आइसक्रीम लाऊँगा मूँफली, टॉफी इत्ती सारी।' कहते हुए माँ रुआँसी हो गई।

उसने चुपचाप अखबार उठाया और ऊपर चला गया।

एक दिन... दो दिन... तीन दिन... चौथे दिन जब वह घर में घुसा तो उसे लगा घर एक हल्की सी उमंग में हिल रहा है।

'पापाजी!' डिंपी ने दूर से ही किलकारी मारी।

'जाओ पापाजी के पास... पियो पापाजी का दूध... पापाजी न हुए...' अंजु की आवाज वापस रसोई में लौट गई।

'डिंपी ये रखा तुम्हारा दूध, पहले इसे खत्म करो।' कहकर अंजू भी डिंपी के साथ बैठ गई। 'छोटे मामाजी आए हुए हैं... यहाँ भी आए थे। वे आने की जिद न करते तो बच्चू...' वह स्वीकारोक्ति में बोली।

वह थोड़ा सीरियस होने का उपक्रम किए रहा।

'क्यों मुँह कैसे सुजा रखा है? अंजू ने कटाक्ष किया।

'अपनी सुनाओ यहाँ तो ठीक ही है।' उसकी भारी आवाज निकली।

'तो सानु भी ठीक ही समझो,' ऐसे नाजुक मोड़ पर वह अक्सर पंजाबी का एक दो शब्द बोलती है।

बस शुरू '...एक बात बताऊँ कल मधु थी यूनिवर्सटी में... गाढ़ी-गाढ़ी लिपिस्टक लगाए... मोटी कितनी हो गई है और ऊपर से ऐसा गहरे गले का ब्लाउज पहन रखा था... मुझे तो बड़ी विचित्र लगी।'

'क्या हाल चाल हैं उसके?' उसने पूछा।

'जब देखो जब हस्बैंड की बातें। मेरे हस्बैंड यूँ करते हैं, मेरे हस्बैंड यूँ कहते हैं... वो मुझे माँ के भी नहीं जाने देते... कहती है बड़ी मुश्किल से आई हूँ, पता नहीं कैसी हो गई है?'

'तो क्या हो गया इसमें? सभी लड़कियाँ शादी के बाद ऐसी ही बातें करती हैं। तुम नहीं करतीं?'

अंजू ने कोई जवाब नहीं दिया। उसकी मुद्रा से लग रहा था कि वह अभी भी मधु के बारे में सोचे जा रही है। बोली... 'मैंने घर आने को कहा तो कहती है, 'मेरे हस्बैंड को फोन करना। तभी आएँगे।' बड़ी आई हस्बैंड वाली!'

'अच्छा' मैंने फूँक लगाई।

'जैसे हस्बैंड न हो गए वीवीआईपी हो गए। खुद नहीं कह सकती मेरे बिहाफ पर। मैं तो बड़ा करूँगी फोन!' अंजू ने मुँह बचकाया।

'तुम्हीं देख लो। मैं ही एक सीधा मिल गया हूँ, जो जहाँ हाँकती हो चल देता हूँ।'

'मैं भी तो चल देती हूँ', कहकर उसने चुटकी काट ली।

'अच्छा तुम्हारा पी.एच.डी. का कितना काम हो गया?'

वह पलभर के लिए हिली - 'क्यों बताऊँ... आपने पता किया कि मैं कहाँ गई... डिंपी की तबीयत कितनी-कितनी खराब रही, बता नहीं सकती। मेरे लिए मेरा डिंपी पहले है पी.एच.डी. बाद में... कोई मरा थोड़े ही जाता है।'

'हाँ जी क्या करना... अपना जाओ और रिसर्च फ्लोर पर पराँठे खाकर आ जाओ।'

'देखों अपने का कम बना करो... जब देखो जब एक ही बात। आपने सोचा आप क्या करते हैं। दिन भर में ये भी नहीं होता कि बच्चे को भी एक घंटा कभी रख लें। जाने कहाँ से पकड़-पकड़कर ले आएँगे और मगज मारते रहेंगे... लेनिन मार्क्स... इलियट... सलमान रशदी... जैसे यही सब तो जिंदगी काट देंगे... सारे पुरुष एक से ही होते हैं। आदमी की यह हुक्म चलाने की मानसिकता कभी जा थोड़े ही सकती है।'

'और औरत की? वो मोटी लग रही थी... उसकी साड़ी देखते तो देखते ही रह जाओ... उसके पास बीस तोले सोना है।'

'तो क्या है नहीं? तुमने तो एक अँगूठी भी नहीं बनवाई। बस ले ले के रखते रहो। गाँव के लोग होते ही ऐसे हैं... कहो तो चिढ़ लगती है।'

बात उस कोने में पहुँच गई थी जिसके आगे कभी भी विस्फोट हो सकता था। वह पानी के बहाने उठ खड़ा हुआ... 'पानी पिओगी?'

'मुझे नहीं पीना। मैं खुद पी लूँगी।'

'कभी हमारे हाथ से भी पी लिया करो। सानु भी धन्य हो जाएँगे।'

उसके चेहरे को बदलता देख मैंने फिर प्रसंग बदला, 'डिंपी तो सचमुच बड़ा शैतान हो गया है।'

'आपको क्या, आप तो अपने अखबार में लगे रहिए। इसे गिरा, इसे तोड़। सचमुच मैंने तो इतना शैतान कोई बच्चा देखा नहीं।' वह उसकी पोथी खोलकर बैठक गई। 'अच्छा एक मिनट मुझे भी दिखाना अखबार'

'क्यों क्या करोगी?'

'देखो शेयर फिर बढ़ने लगे। पेंटेप बीस हो गया और गोदावरी फर्टीलाइजर छब्बीस।'

'अंजू पंकज जी की किताब राजकमल से आ रही है।'

'अबकी तो मैं जरूर निकाल दूँगी। दो साल से ऐसा मंदा पड़ा है शेयर मार्किट में...'

'बड़ा अच्छा रहा। राजकमल की प्रतिष्ठा भी बहुत अच्छी है।'

'रायल्टी कितनी मिलेगी।' अंजू ने सीधा प्रश्न किया।

'अंजू रायल्टी कुछ भी मिले। बात रायल्टी की नहीं होती।'

'अच्छा दशहरे की छुट्टियों में हम शिमला जरूर चलेंगे। अभी से कहे देती हूँ।'

'अरे शिमला क्यों? तुम कहो तो स्विट्जरलैंड ले चलें।'

वह उठी और मुस्कराते हुए डिंपी की पौटी साफ करने चली गई।